International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 9, Issue 5, May - 2019,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

भारतीय राष्ट्रीय चेतना और 1857 की राज्यक्रांति

ऋषि कुमार देव
शोधार्थी
स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

सन् 1857 की घटना राष्ट्रीय जागरण की एक महान घटना है। असल में राष्ट्रीय चेतना की पहली नींव यहाँ से ही रखी गई। सभी जनता का दुःख एक जैसा था तो अपने–अपने दुःख को बाँटने के लिए एक होना ही उचित समझा गया। 1857 के संग्राम के सफल होने की अवस्था में शायद यह चेतना अपना दायरा सीमित कर लेती। इसकी व्याख्या कई तरह से की गई है और आज भी की जा रही है। आश्चर्यजनक नहीं है, यदि 1857 के संदर्भ में आज भी ऐसे निष्कर्ष निकाले जा रहे हो कि यह आंदोलन सफल हो जाता तो भारत कूपमंडू रह जाता, इतनी जल्दी नई शिक्षा पद्धति नहीं आती और देश इतनी जल्दी आधुनिक नहीं हो पाता फिर से भारत छोटे–छोटे क्षेत्रों में विभक्त हो जाता। सफलता की अवस्था में भारत की बागडोर को लेकर भी विद्वानों में संशय हैं।

1857 का विद्रोह के कारणों में अनेक कारण थे लेकिन कुछ कारणों से इस आंदोलन ने राष्ट्रीय रूप धारण कर लिया और भारतवर्ष को एक सूत्र में पिरोने का काम किया। ऐसा लगता है कि 1857 की क्रांति के कारण ही भारत 1947 को आजाद हो गया अन्यथा आजादी के सवेरे के लिए न जानें कितने और दिन तरसना पड़ता। इस क्रांति से लगा कि यह भूमि एक ही भूखंड है जिसे अलग–अलग राजा रजवाड़ों में अलग–अलग नाम दे रख हैं। इस आंदोलन को राष्ट्रीय जामा पहनाने में कुछ परिस्थितियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। 1857 के विद्रोह को जन्म देने बाले कारणों में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक सभी कारण जिम्मेदार थे। डलहौजी को व्ययगत नीति और वेलेजली की 'सहायक संधि' से अंग्रेजों ने षड्यंत्र करके जैतपुर, सम्भलपुर, झांसी, नागपुर आदि राज्यों को ब्रिटिश साम्राज्य में विलय कर लिया साथ ही मुगल बादशाह को अपमानित करने के लिए उन्हें नजर देना, सिक्कों पर नाम खुदवाना आदि परम्परा को डलहौजी ने समाप्त करवा दिया, साथ ही बादशाह को लालकिला छोड़कर कुतुबमीनार में रहने का आदेश दिया जिससे जनता ने अपना अपमान महसूस किया और विद्रोह के लिए मजबूर हुए।[1]

स्थायी बंदोबस्त, रैय्यतवाड़ी व्यवस्था और फिर महालवारी व्यवस्था द्वारा किसानों का जबरन शोषण किया गया जिससे वे निर्धनता के कुचक्र में फंसते चले गये। निर्धनता और अकालों की मार ने किसानों को मजबूर कर दिया क्रांति में कूदने को। अंग्रेजी प्रशासन के सुधारवादी उत्साह के अंतर्गत पारम्परिक भारतीय प्रणाली और संस्कृति संकटग्रस्त स्थिति में पहुंच गई, जिनका रूढिवादी भारतीयों ने जमकर विरोध किया। साथ में ब्रिटिश सरकार ने ईसाई धर्म के प्रचार के लिए पर्याप्त सुविधाएं सरकार द्वारा प्रदान की गई। 1856 के 'धार्मिक निर्योग्यता अधिनियम' के द्वारा ईसाई धर्म ग्रहण करने वाले लोगों को अपनी पैतृक सम्पत्ति का हकदार माना गया साथ ही उन्हें नौकरियों में पदोन्नति, शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश की सुविधा प्रदान की गई।[2] अंग्रेजों की इस नीति ने भारतीयों को अन्ततः विद्रोह के लिए मानसिक रूप से तैयार कर दिया। इस तरह के अनेक कारण और भी थे जिससे किसान, जमींदार, एवं अंग्रेजों ने ही अपनी नीतियों के माध्यम से तैयार कर दिया। इनको इंतजार था तो सिर्फ एक शुरूआत का जिसके माध्यम से ये सब अपने हक के लिए लड़ सके। कैनिंग की दो घोषणाओं ने आग में घी डालने का काम किया। पहली घोषणा में सेना में नये रंगरूटों के लिए समुद्रपार के ब्रिटिश प्रदेशों में सेवा करना अनिवार्य कर दिया गया, जिसे वे (भारतीय सैनिक) अपने धर्म के विरुद्ध समझते थे। दूसरी घोषणा, इस आंदोलन का तात्कालिक कारण बनी जिसमें

सैनिकों को एक ऐसे कारतूस के प्रयोग के लिए विवश होना पड़ा जिसमें 'गाय' और 'सुअर' की चर्बी लगी हुई थी। एनफील्ड रायफल में कारतूस को प्रयोग में लाने से पूर्व दाँत से खींचना पड़ता था, चूँकि कारतूस में 'गाय' और 'सुअर' दोनों की चर्बी लगी थी इसलिए हिन्दू और मुसलमान दोनों भड़क उठे, परिणामस्वरूप 10 मई 1857 को मेरठ से विद्रोह की शुरूआत हुई। एन.आई. की 20 और एल.सी. की 03 पैदल सैन्य टुकड़ी ने चर्बी वाले कारतूस के प्रयोग से इंकार कर दिया। इससे पहले 29 मार्च को बैकरपुर छावनी में 'मंगल पाण्डे' नामक सिपाही ने चर्बी लगे कारतूस के प्रयोग से इंकार करते हुए अधिकारी लेफ्टिनेंट बाघ और लेफ्टिनेंट जनरल ह्यूमन की हत्या कर दी। 11 मई को सैनिक टुकड़ी ने दिल्ली पर अपना अधिकार जमाते हुए मुगल बादशाह बहादुरशाह द्वितीय को पुनः भारत का सम्राट और क्रांतिकारियों का नेता घोषित कर दिया।[3]

क्रांतिकारियों की दिल्ली विजय का समाचार समूचे देश में आग की तरह फैल गया। देखते–देखते ही 5 जून को कानपुर, 4 जून को लखनऊ साथ में 4 जून को ही झांसी की रानी ने 'क्रांति' का बिगुल बजा दिया इन सबकी लपटों ने बरेली, जगदीशपुर, अलीगढ़, रूहेलखंड, इलाहाबाद, ग्वालियर को क्रांति की गिरफ्त में ले लिया।[4] इस क्रांति में भले ही कुछ राज्य को अपने–अपने लिये लड़ रहें हों लेकिन उनका शत्रु और उद्देश्य एक था अंग्रेजों को मार भगाना। यही बात राष्ट्रीय भावना जगाने में असरदार साबित हुई। क्रांति ने प्रतीक के रूप में 'कमल और रोटी' को चुना गया था। 'कमल' के फूल को उन सभी सैन्य टुकडियों तक पहुँचाया गया जो विद्रोह में शमिल थी तथा रोटी को एक गाँव का चौकीदार दूसरे गाँव तक पहुँचाता था।[5] इन बातों से एक नवीन भारतवर्ष की नींव डलती देखी जा सकती थी भले ही क्रांति अंग्रेजों को भगाने में सफल नहीं हो सकती हों। 17 जून 1858 को झांसी को रानी मर्दानगी के साथ अंत तक लक्ष्य पर अटल रही और युद्धक्षेत्र में लड़ते हुए अपने प्राण त्याग दिये। जनरल ह्यूरोज ने, जिसने उन्हें पराजित किया, अपने दुर्जेय शत्रु के बारे में कहा है कि ''यहाँ वह औरत सोई हुई है जो विद्रोहियों में एकमात्र मर्द थी।''[6]

इतिहासकारों ने 1857 की क्रांति के विषय में भिन्न–भिन्न मत प्रकट किये हैं। इस क्रांति को लेकर विवाद रहा है कि इसका स्वरूप क्या था और इसे क्या नाम दिया जाये? यह 'साजिश' थी या "स्वप्रेरित विद्रोह, सामंती प्रतिक्रिया थी या "प्रतिष्ठा वापस पाने'' का आंदोलन या फिर एक 'धार्मिक युद्ध' लोग अपनी कठिनाइयों से त्रस्त होकर इस विद्रोह के लिए लामबंद हो या यह राजनीतिक शून्य से उपजा लोगों का प्रकोप था? बीते कुछ वर्षों में इस बात को अधिकाधिक तीव्रता से अनुभव किया जा रहा है कि 1857 का विद्रोह इतना जटिल था कि इसे कोई एक नाम देकर समझाना मुमकिन नहीं है।

डॉ. रामविलास शर्मा 1857 ई. के विद्रोह का उचित मूल्यांकन पर जोर देते हुए लिखते हैं कि "भारत में अंग्रेजी राज कायम करने के सिलसिले में प्लासी की लडाई में 1857 ई. के स्वाधीनता संग्राम तक जो युद्ध हुए, वे जनजागरण के दूसरे दौर के अंतर्गत हैं। यह दौर पहले से भिन्न है। मुख्य लड़ाई विदेशी शत्रु से है। यह साम्राज्य विरोधी जन–जागरण है। भारतेन्दु युग इस जनजागरण से जुड़ा हुआ है जो लोग मानते हैं कि 1857 ई. में कुछ देशी सामंत अपने स्वार्थों के लिए ही लड़े थे, वे अक्सर यह भी मानते हैं कि भारतेन्दु युगीन साहित्य की मुख्यधारा अंग्रेजी राज के प्रति भक्तिभाव से प्रेरित थी।[7]

डॉ. रामविलास शर्मा ने भक्तिकाल को नवजागरण का प्रथम दौर माना तथा इसे सामंत विरोधी जनजागरण कहा। डॉ. शर्मा के साथ–साथ अन्य इतिहासकारों एवं विद्वानों के मतों का संक्षेप में विवरण यहाँ देना चाहूँगा जिन्होंने 1857 ई. की क्रांति को अनेक स्वरूपों में देखा –

सुरेन्द्रनाथ सेन ने अपनी पुस्तक 1857 में इस क्रांति के बारे में लिखा कि "आंदोलन एक सैनिक विद्रोह की तरह आरंभ हुआ लेकिन केवल सेना तक सीमित नहीं रहा। सेना ने भी पूरी तरह विद्रोह में भाग नहीं लिया। साथ ही इस उपद्रव को केवल सैनिक विद्रोह कहना गलत होगा।[8] प्रसिद्ध क्रांतिकारी विनायक दामोदर सावरकर ने इस राष्ट्रीय घटना पर समग्र पुस्तक लिखी। वे भारतीय क्रांतिकारी आंदोलन के वे

अग्रिम पंक्ति के योद्धा थे। 1907 में उनकी पुस्तक लंदन में प्रकाशित हुई। सावरकर ने इस संग्राम के चंद सामंतों का अपनी खाई हुई प्रतिष्ठा वापस लेने का असफल प्रयास मानने से इंकार कर दिया था और इसको 'स्वधर्म और स्वराज' के लिए संघर्ष की संज्ञा देते हुए इसमें भारतीय जनता के बड़े हिस्से की भागीदारी को रेखांकित किया। वे अपनी पुस्तक में लिखते है :

''वस्तुतः 1857 के इस स्वतंत्रता संग्राम को प्रदीप्त करने वाले दिव्य तत्व थे, 'स्वधर्म और स्वराज्य' स्वधर्म–प्रीति के ये तत्व हिंदुस्तान के इतिहास में जितनी उदात्तता सहित अभिव्यक्त हुए हैं, उतने अधिक तो किसी देश के इतिहास में परिलक्षित नहीं होते। चाहे विदेशी और पक्षपात के चश्मे अपने नेत्रों पर चढ़ा कर लिखने वालों ने हमारी हिंदू भूमि के उज्ज्वल चित्र को कितने ही घिनौने रंगों में रंगने का प्रयास क्यों न किया हो किंतु जब तक हमारे देश के इतिहास के पृष्ठों में चित्तौड़ का पावन नाम विद्यमान है, सिंहगढ़ का नाम मिटाया नहीं जाता, प्रतिपादित्य का नाम अंकित है, गुरु गोविंद सिंह का नाम विद्यमान है जब तक 'स्वधर्म और स्वराज' के मूल सिद्धांत हिंदुस्तान की संतानों की अस्थियों और मज्जा में समाए ही रहेंगे।''[9]

विनायक दामोदर सावरकर जी ने इस संघर्ष को जनता की लड़ाई मानते हुए भी, वे इसे 'स्वधर्म और स्वराज' की लड़ाई कहना पसंद करते हैं। अधिकांश भारतीय इतिहासकारों ने इस क्रांति का संबंध भारतीय जनता के निचले तबके से माना। इन इतिहासकारों ष्का कहना है कि 1857 को क्रांति केवल सैनिक विद्रोह नहीं था। उसमें ब्रिटिश राज के खिलाफ व्यापक जनअसंतोष की अभिव्यक्ति हुई थी। प्रसिद्ध इतिहासकार – रमेशचद्र मजमुदार इसको मूलतः सिपाही विद्रोह से अधिक अहमियत नहीं देते। उनके विचार से राष्ट्रीय आंदोलन से नहीं जोड़ा जा सकता क्योंकि देश के अलग–अलग भागों में इसका रूप एक जैसा नहीं था।[10]

डॉ. ताराचंद ने भी इस विप्लव को मध्ययुगीन विशिष्ट किंतु अशक्त वर्गों का अपनी खोई हुई सत्ता को प्राप्त करने का अंतिम प्रयास बतलाया। उनका मानना था कि वे वर्ग अंग्रेजी नियंत्रण से मुक्ति चाहते थे क्योंकि अंग्रेजी प्रशासकीय नीतियों से उन विशिष्ट वर्गों के हितों को हानि पहुँचाती थी।[11] इसके विपरीत शशिभूषण चौधरी इस बात को सप्रमाण रेखांकित करते हैं कि इसका आरंभिक रूप चाहे जैसा भी था लेकिन भारत के उत्तरी भाग की सामान्य जनता की इसमें बहुत बड़ी भागेदारी थी। वे अपने शब्दों में लिखते हैं।

''सन् 1857 का महा जनविद्रोह सिपाही विद्रोही भर नहीं था। इसके कई प्रेरणास्त्रोत थे जिन्होंने इस क्रांतिकारी उभार को हवा दी। धर्म के अलावा इसमें आर्थिक तथा राजनीतिक कारण सक्रिय थे यद्यपि ऊपरी तौर पर धर्म तात्कालिक कारण के रूप में दिखाई पड़ता है।''[12]

भारत की समग्र जनता में अनेक प्रकार का आक्रोश ब्रिटिश सरकार के खिलाफ उमड़ा हुआ था। समाज के सभी वर्गों या समूहों को अपनी दुर्दशा एक मात्र कारण अंग्रजी सरकार नजर आ रही थी। इसके पीछे सक्रिय सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक कारण एक–दूसरे से गहरे जुड़े हुए थे।

प्रसिद्ध मार्क्सवादी इतिहासकार रजनी पामदत्त को स्थापना उपर्युक्त स्थापना के एकदम विपरीत है। वे अपनी पुस्तक आज का भारत में लिखते है–

''1857 का विद्रोह बुनियादी तौर पर पुराने अधिकारों और विशेष सुविधाओं की माँग के लिए किया गया विद्रोह था। विद्रोह के इस प्रति–क्रियावादी स्वरूप के कारण जनता के व्यापक समर्थन का अभाव रहा और उसे विफल हो जाना पड़ा।''[13]

लेकिन व्यापक तौर पर दस्तावेजों की छानबीन करने के बाद प्रमाण इसके विपरीत मिलते हैं। दस्तावेजों से पता चलता है कि 1857 ई. के बाद आम जनता का जबर्दस्त दमन किया गया। इसके लिए अनेक कठोर अधिनियम लाये गये। हर वर्ग की जनता को चुन कर सजा दी गई। इस प्रकार के लोगों में सैनिक तथा असैनिक दोनों प्रकार के लोग शामिल थे। तरह–तरह के कठोर दण्डों की व्यवस्था की गई।

यहाँ तक की जिन क्षेत्रो में इसका गहरा प्रभाव व्यापक या उन क्षेत्रों में गाँवों को जला दिया गया। पूरे गाँव की संपत्ति नष्ट कर दी गई।[14]

इस बात से रजनी पामदत्त की स्थापना का खंडन होता नजर आता है। स्वयं पामदत्त ने भारत के एक गवर्नर लार्ड मेटकॉफ को उद्धृत किया है जिससे जनता के असंतोष की गहराई का पता चलता है और इस बात का संकेत भी मिलता है कि जनता इस प्रकार के विद्रोह के लिए भरी बैठी थी। इसका संकेत करते हुए 1835–36 ई. में मेटकॉफ ने लिखा था 'समूची जनता हमारे विनाश पर आनंद मनाना चाहेगी और उन लोगों की संख्या कम नहीं है जो अपनी ताकत भर इस काम को दावा देंगे।'[15]

कार्ल मार्क्स ने इस आंदोलन को राष्ट्रीय विद्रोह कहा वे अपने विचार प्रकट हुए कहते है "क्रमशः और दूसरे तथ्य निकल–निकल कर सामने आएंगे जिनसे मुल्क तक को विश्वास हो जाएगा कि जिसे वह सैनिक विद्रोह समझता था, वह वास्तव में राष्ट्रीय विद्रोह है।''[16]

डॉ. रामविलास शर्मा रजनी पामदत्त की स्थापना को काटते हुए प्रतीत होते है। वे लिखते है :–

'अंग्रेजों ने भारत पर अपना राज कायम करने के लिए लिए और उस राज को बनाए रखने के लिए देशी फीज खड़ी की थी, वह विद्रोह कर रहीं थी। जिन हिंदू और मुसलमान सामंतों की जायदाद छीन ली गई थी वे अंग्रिजों का विरोध कर रहे थे। यह बात विद्रोह के राष्ट्रीय स्वरूप को सिद्ध करने के लिए काफी थी। 1857 ई. की लड़ाई यदि सिपाहियों के असंतोष का ही परिणाम होती और उन तक सीमित रहती तो वह सैनिक विद्रोह होती। किंतु यहाँ सैनिकों के साथ गैर फौजी वर्ग शामिल था। पाठक यहाँ देखेंगे कि लड़ाई में सामंतों के शामिल होने से मार्क्स ने जो निष्कर्ष निकाला है वह उन इतिहासकारों के निष्कर्ष से ठीक उल्टा है जो सामंतों के शामिल होने को ब्रिदोह के अंतर्राष्ट्रीय होने का प्रमाण मानते है।''[17]

प्रस्तुत उद्धरणों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि 1857 की राजक्रांति विदेशी शासन से मुक्ति पाने का अखिल भारतीय स्तर का प्रथम संगठित प्रयास था। आदिवासी विद्रोहों से निकली हल्की चिंगारी ने यहाँ तक आते–आते व्यापक रूप धारण कर लिया।

संदर्भ ग्रंथ :–

1. विपिन चंद्रा : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, प्रकाशन हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
2. अयोध्या सिंह : भारत का मुक्ति संग्राम, मैकमिलन इण्डिया प्रकाशन
3. डॉ0 सत्य0 एम0 राय : भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद, माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
4. डॉ0 ताराचंद्र : हिस्ट्री ऑफ फ्रिडम मूवमैन्ट
5. विपिन चंद्रा : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, प्रकाशन हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
6. विपिन चंद्रा : भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, प्रकाशन हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय
7. रामविलास शर्मा : भारतेन्दु हरिश्चंद्र और हिन्दी नव जागरण की समस्याएँ, नई दिल्ली
8. सुरेन्द्रनाथ सेन : 1857
9. विनायक दामोदर सावरकर : 1857 का भारतीय स्वातंत्र्य समर
10. आर0 सी0 मजुमदार : दी सिपोए म्यूटनी एंड दि रिवोल्ट ऑफ 1857
11. डॉ0 ताराचंद्र : हिस्ट्री ऑफ फ्रिडम मूवमैन्ट
12. शशिभूषण चौधरी : सिविल रिवेलियन इन दि इण्डियन म्यूटिनीज, कलकत्ता
13. रजनी पाम दत्त : आज का भारत
14. वही
15. कार्ल मार्क्स : दि फस्ट इण्डियन वार ऑफ इण्डिपेनडेन्स, मास्को
16. रामविलास शर्मा : आस्था और सौंदर्य, नई दिल्ली
17. वही